हैदराबाद आर्य धर्म युद्ध में—

हमें क्या मिला ?

व्यासदेव शास्त्री

हमें क्या मिला

भूमिका लेखक

श्री पं० रामचन्द्र जी देहलवी

आर्योपदेशक

लेखक

श्री पं० व्यासदेव जी शास्त्री

M. A. L.L. B

* ओ३म् *

नितान्त गोपनीयम्

हैदराबाद धर्म युद्ध से:—

हमें क्या मिला ?

लेखक—

श्री पं० व्यासदेव शर्मा शास्त्री

M. A., L L. B.

प्रधान आर्य युवक संघ देहली।

भूमिका लेखक—

श्रीमान् पं० रामचन्द्र जी देहलवी

आर्य महोपदेशक

प्रकाशक—

मन्त्री प्रकाशन विभाग, आर्य युवक संघ

दिल्ली।

❋ भूमिका ❋

इसमें कोई शंका नहीं है कि हैदराबाद सत्याग्रह शुरू करने से पहले वहां पर जो कवायद व कवानीन धार्मिक व राजनैतिक सभाओं के कायम करने और चलाने व जुलूस वगैर: निकालने के मौजूद थे वे अब तक करीब २ वैसे ही हैं। ८ अगस्त के कम्यूनिक में किसी २ बात का थोड़ा सा स्पष्टीकरण तो हुआ है परन्तु बुनयादी तौर पर कोई नई बात स्वीकृत या घोषित नहीं की गई है--ऐसी अवस्था में जहाँ तक कानून का तअल्लुक है आर्यसमाज का अपने को विजयी मानना उसके नेताओं की उक्त कवायद व कवानीन से नावाक़फियत को ज़ाहिर करता है और हैदराबाद के हुक्काम व मुदब्बिरीन की निगाह में उनकी वक़त को कम कर देता है--यह एक ऐसी सचाई है जिससे कोई भी इन्कार नहीं कर सकता। हाँ इतना ज़ुरूर माना जा सकता है कि व्यवहार में जिन बातों को रियासत में नहीं होने दिया जाता था, उनको साफ़ कर लिया गया है। हालाँ कि इस उम्मीद या वायदे के सच होने का प्रमाण भी उसी समय माना जा सकेगा जब कि आर्यसमाज वहाँ जाकर तमाम बातों को आजमावे और उनमें वहाँ के हुक्काम की तरफ से कोई रोड़ा न अटकाया जावे।

मैं अधिकारियों की मुश्किलात व मजबूरियों का पूरा अहसास रखते हुये यह मानता हूँ कि उनसे दूर रहने वाले लोगों की निगाह में उनके कार्य में पग २ पर दोष दिखाई देते हों। पर कोई २ भूलें ऐसी भी हो सकती हैं जिनको वह खुद भी मंजूर करें इसी लिये श्री पं० व्यासदेव शास्त्री के लेखानुसार कानून संबन्धी वाकफ़ियत के हासिल करने में ग़फ़लत या प्रमाद अवश्य रहा है। मैं शास्त्री जी की इस बात को भी मानता हूँ कि किसी रियासत के हुक्काम का अमल अगर वहाँ के कानून के ख़िलाफ़ हो तो इसकी चारा जोई Judicial court- में की जानी चाहिये-परन्तु साथ ही मुझे ज़बरदस्त शंका है कि इस किस्म की चारा जोई का क्या वह असर हो सकता था जो असर कि सत्याग्रहके द्वारा हुये तप, त्याग और बलिदानों से हुआ है। इस लिये मैं इस व्यवस्था को दैवी मानकर संतुष्ट हूँ कि जो कुछ हुआ

अच्छा ही हुआ और आगे भी अच्छा ही होगा—हाँ जितना सचेत व सतर्क भविष्य में अधिकारियों को रहना चाहिये उसका ध्यान वह रक्खें ताकि किसी को इतना कहने का भी कष्ट न करना पड़े।

अन्त में मैं यह बता देना चाहता हूँ कि आर्य व हिन्दु जनता ने सार्वदेशिक सभा पर लगातार रोष प्रकट किया है, इसका स्पष्ट कारण यह था कि सार्वदेशिक सभा के अधिकारी महात्मा गान्धी जी के परामर्ष के लिये बार २ जाते रहे—महात्मा गान्धी कोई अछूत नहीं हैं कि उनसे किसी किस्म की राय भी न ली जावे परन्तु असिल कारण यह है कि Congress Govt. ने चूंकि हिन्दुओं की Cost पर मुसलमानों को फायदा पहुँचाया और उनकी ख़ुशामद की है इस लिये सर्व साधारण का विश्वास Congress पर से जाता रहा है। महात्मा जी चूंकि Congress के प्राण हैं इस लिये यह समझ लिया था कि उनकी राय आर्यसमाज के लिये ऐसी नहीं हो सकती जैसी कि आर्य समाज के किसी पूर्ण हितैषी की हो सकती है—इसलिये यदि अधिकारियों ने ज़रा खबरों के शाया करने में सावधानी से काम लिया होता तो जनता का रोष उन पर इतना न होता। अन्य लोग यह भी शक कर सकते हैं कि इन नेताओं में आत्मविश्वास की कमी है।

ता० १८-८-१९३९

रामचन्द्र देहलवी आर्योपदेशक
आर्य समाज नया बांस दिल्ली
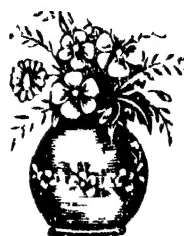
प्राक्—कथन

मैंने इस लेख को केवल स्वान्तः परितोष के लिये लिखा था। पर अपने अन्तरंग मित्रों से मैं इसे न छिपा सका। इसको सुनने पर उनकी यह सम्मति हुई कि इसे अवश्य प्रकाशित करना चाहिये। परम आदरणीय श्री पं० रामचन्द्र जी देहलवी ने यह भी सम्मति प्रकट की कि यह केवल आर्य समाज के विचार शील महानुभावों तक ही सीमित रहना चाहिये। मैंने इन सब सम्मतियों को आदर से देखा है और उस पर आचरण करने का यत्न किया है। श्री देहलवी जी ने जो भूमिका लिखने की कृपा की है। उसके लिये मैं आभारी हूँ।

मेरा उद्देश्य इस ट्रैक्ट को प्रकाशित करने का यह है कि हमारे आर्य नेता व अधिकारी गण अपने पदों के उत्तरदायित्व को इस प्रकार निभावें कि सर्व साधारण से लेकर विद्वान् विचारकों तक उनका कार्य कम से कम दोष युक्त समझा जावे और दुपलड़ी तबियत बनाकर अपने लक्ष्य से भटक न जावे। सार्वजनिक कार्यों में लेशमात्र भी स्वार्थ की मात्रा न आने देवें ताकि स्वतन्त्र और विद्वान् विचारकों का परामर्ष उनके मनको न अखरे और उससे लाभ उठावें।

इस विषय का विवेचन नवराष्ट्र बम्बई के सम्पादकीय अग्र लेखों में भी हुआ है जिनके लेखक श्री माननीय पं० इन्द्र जी विद्यावाचस्पति हैं ऐसा मेरा अनुमान है। वे लेख आर्य जनता के लिये विचारणीय हैं। मेरे आदरणीय बन्धु श्री प्रो० रामसिंहजी M.A. ने भी स्थानीय दैनिक हिन्दू में अपना विचार प्रकट किया है जो मननीय है।

मैं यह भी निःसंकोच प्रकट करता हूँ कि यदि कोई महानुभाव मेरे विचारोंमें भ्रम सुझाने की कृपा करेंगे तो मैं अत्यन्त अनुगृहीत हूँगा।

१६—८—१९३९ व्यासदेव शास्त्री

* ओ३म् *

हमें क्या मिला ?

इस समय कोई भी ऐसा आर्य पुरुष नहीं होगा जिसने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की यह घोषणा न पढ़ी हो कि आर्य समाज का सत्याग्रह संग्राम पूर्ण सफल हो गया है, आर्य समाज की सब माँगे स्वीकार कर ली गयी हैं और इसलिये इस संग्राम को अब बन्द कर देना चाहिए। इस समाचार से सम्पूर्ण आर्य जगत् प्रफुल्लित हो उठा है और कहीं २ तो इस हर्ष को प्रकट करने के लिये दीवालियें भी मनायी गयीं हैं। यह भी घोषणा की गई है कि शीघ्र ही सब सत्याग्रही जेलों से छूट जायेंगे और सम्भव है कि जिस समय यह लेख पाठकों के सम्मुख पहुंचे उस समय तक वे वीर आत्मायें हम लोगों के बीच में हो और आर्य जनता उनके स्वागत में तल्लीन हो। ऐसे समय में यह आवश्यक है कि प्रत्येक आर्य यह जानने का यत्न करे कि अन्ततः आर्य समाज की कौन सी माँगें स्वीकार हो गयी हैं। यह तो किसी से छिपा नहीं है कि सार्वदेशिक सभा की आज्ञा से आर्य समाज ने इस संग्राम में लगभग २४ वीर आत्माओं का बलिदान किया, १२ सहस्र के लगभग वीर पुरुष हैदराबाद की जेलों में गये जिनमें से अधिकतर वहां अमानुषिक अत्याचारों से अंग भंग होकर असहाय हो गये हैं। धन का व्यय कितना हुआ है इसकी अभी कोई निश्चित संख्या तो प्रकाशित नहीं हुई पर इसमें सन्देह नहीं कि पांच लाख रुपये से कम व्यय किसी अवस्था में भी नहीं हुआ। यह सत्याग्रह संग्राम भारत के अन्य सत्याग्रह संग्रामों की अपेक्षा अत्यन्त बलशाली, सार्वजनिक, प्रभावशाली और अधिक सत्य तथा अहिंसा के आधार पर अवलम्बित था। पग पग पर कठोर अनुशासन का पालन किया गया। यह सब कुछ लगातार छः मास तक करने पर आर्य समाज को क्या मिला ? यह एक स्वाभाविक प्रश्न है जो कि प्रत्येक आर्य की जिह्वा पर होना चाहिये और है। आज हमें इसका उत्तर दो मार्गों से मिल रहा है। प्रथम तो सार्वदेशिक सभा के प्रस्ताव द्वारा और दूसरे हिन्दी तथा उर्दू के

समाचार पत्रों द्वारा जो कि आर्य समाज में अधिकतर पढ़े जाते हैं। जहां तक सार्वदेशिक सभा के प्रस्ताव का सम्बन्ध है वह स्वयं स्थिति को स्पष्ट नहीं करता और यह नहीं बतलाता कि कौन सी हमारी मांगें स्वीकृत हो चुकी हैं। मेरे विचार में हमारे समाचार पत्रों ने इस समय ईमानदारी से काम नहीं लिया और उनमें से बहुतों ने "गतानुगतिको लोकः" की उक्ति को चरितार्थ किया है। लाहौर के हिन्दी मिलाप ने प्रकाशित किया कि आर्य समाज को क्या मिला ? और उत्तर में चार बातें लिखीं।

१—रियासत हैदराबाद में हर स्थान पर बिना इजाज़त आर्य समाज मन्दिरों की स्थापना हो सकती है।

२—आर्य समाज मन्दिर और अहातों में भाषण देने और धर्म प्रचार की खुली आज्ञा। बाहर प्रचार के लिये सूचना मात्र देनी होगी।

३—प्राईवेट स्कूल खोले जा सकते हैं-आज्ञा की आवश्यकता नहीं।

४—जलूस और नगर कीर्त्तन निकाले जा सकते हैं। इनके लिये केवल एक बार आज्ञा लेनी होगी। फिर नहीं।

मैं तो यह पढ़कर स्तम्भित रह गया और मेरे आश्चर्य की सीमा न रही जब मैंने यही बात अक्षरशः एक स्थानीय हिन्दी दैनिक में पढ़ी। जब माननीय सम्पादक जी के सामने रियासत का कम्यूनिक रखकर पूछा तो बोले "हमने तो कम्यूनिक पढ़ा नहीं, जैसा मिलाप में छपा था हमने भी छाप दिया" कम्यूनिक पढ़ने पर वे मुझ से सहमत हो गये कि समाचार पत्रों ने इस समय ईमानदारी से काम नहीं लिया।

इसलिये इन दोनों मार्गों का अवलम्बन त्याग कर और किसी भी बड़े से बड़े महानुभाव की सम्मति की ओर ध्यान न देकर स्वयं मौलिक बातों से इस बात का निर्णय करना चाहिये कि इस संग्राम के परिणाम स्वरूप हमें क्या मिला ? इस से पूर्व यह भी जान लेना आवश्यक है कि हमने क्या मांगा था ? यूँ तो सार्वदेशिक सभा बहुत वर्षों से प्रयत्न शील थी परन्तु मई सन् १९३८ में सार्वदेशिक सभा ने नियमित रूप से १४ माँगें निजाम सरकार के सामने रक्खीं थी। वे माँगें इतनी

अधिक प्रकाश में आ चुकी हैं कि उनको यहां लिखना इस लेख के कलेवर को बढ़ा देना ही होगा। दिसम्बर मास में जब शोलापुर में आर्य काँग्रेस होने लगी तब निज़ाम सरकार ने एक पुस्तक प्रकाशित कराई जिसका नाम था The Arya samaj in Hyderabad. यही वह पुस्तक है जो कि White paper (श्वेत पत्र) के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें अन्य बातों के अतिरिक्त आर्य समाज की १४ माँगों पर भी प्रकाश डाला गया था और लगभग १२ पृष्ठों में इस की चर्चा थी। इसके अनन्तर आर्य सम्मेलन शोलापुर में प्रस्ताव संख्या ४ में आर्य समाज की माँगें केवल ६ रह गयीं और मेरे विचार से बहुत सी अनावश्यक बातों का परित्याग कर देने से तथा सुचारू रूप से लिखने पर प्रस्ताव संख्या ४ में आर्य समाज की माँगें पहली १४ माँगों से अधिक व्यापक और उचित था। इसके साथ ही प्रस्ताव संख्या ५ भी पास किया गया जिसके द्वारा सत्याग्रह का काम दो माँगों पर केन्द्रित किया गया। १६ जुलाई को रियासत की ओर से एक असाधारण गज़ट प्रकाशित किया गया और सुधारों की घोषणा की गयी। इन सुधारों की घोषणा होते ही १६ जुलाई को सत्याग्रह स्थगित कर दिया गया और २५ ता० को सार्वदेशिक सभा ने इस पर अपनी मोहर भी लगा दी और कुछ बातों का स्पष्टीकरण निज़ाम सरकार से चाहा वह स्पष्टीकरण ८ अगस्त को एक कम्यूनिक निकाल कर निज़ाम सरकार ने कर दिया है। मेरे इतना लिखने का तात्पर्य यह है कि इस संग्राम की सफलता या विफलता या हमारी मांगें क्या थीं और वे पूरी हुई या नहीं यह विचारने के लिये हमें निम्नलिखित मौलिक वस्तुओं की ओर ध्यान देना चाहिये:—

१—आर्य समाज की १४ माँगें।
२—निज़ाम सरकार का श्वेत पत्र।
३—सम्मेलन प्रस्ताव संख्या ४ और ५।
४—निज़ाम सरकार का गज़ट।
५—निज़ाम सरकार का कम्यूनिक।

मैं समझता हूं कि पक्षपात शून्य विचार करने के लिये केवल इन्हीं वस्तुओं की आवश्यकता है। मैंने इस सम्बन्ध में जो विचार किया है वह पाठकों के सम्मुख रख देना उचित प्रतीत होता है।

हमें सब से पहले प्रस्ताव संख्या ५ की उन दो माँगों को लेना चाहिये जो कि अत्यन्त महत्व पूर्ण थीं और जिन पर सत्याग्रह को केन्द्रित किया गया था। वे माँगें निम्नलिखित हैं:—

१—अन्य मतावलम्बियों के भावों का उचित सम्मान करते हुये वैदिक धर्म और संस्कृति के प्रचार एवं अनुष्ठान की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिये।

२—नये आर्य समाजों की स्थापना, नये आर्य मन्दिरों व हवन कुण्डों के निर्माण या पुराने मन्दिरों की मरम्मत करने के लिये धर्म विभाग अथवा किसी अन्य विभाग की आज्ञा लेने की आवश्यकता नहीं रहनी चाहिये।

उपर्युक्त माँगों का विश्लेषण हमें यह बतलाता है हमारी संक्षेप में माँगें ये थीं कि हमें:—

१—वैदिक धर्म के प्रचार के लिये जल्से आदि करने की स्वतन्त्रता हो

२—वे कानून हटा दिये जायें जिनसे वैदिक धर्म के अनुष्ठान में बाधा पड़ती है।

३—आर्य समाजों की स्थापना हो सके और

४—समाज मन्दिरों का निर्माणादि स्वतन्त्रता पूर्वक हो सके।

निःसन्देह पहली बात का सम्बन्ध उस कानून को रद्द कराने से है जिससे सार्वजनिक सभाओं के करने में बाधा पड़ती है। वह कानून है गश्ती निशान ५३, इसीलिये १४ माँगों में से पहली मांग स्पष्टरूप से यही थी। गश्ती निशान ५३ का आशय यह है कि "किसी भी सार्वजनिक सभा के संयोजक का यह कर्त्तव्य है कि सभा की तिथि से कमसे कम १० दिन पूर्व सरकार के अधिकारियों को इसकी सूचना दे। यदि अधिकारी यह समझे कि सभा राजनैतिक है तो वे संयोजक को सूचना देगें कि सभा करने के लिये आज्ञा प्राप्त करना आवश्यक है, अन्यथा सभा के लिये आज्ञा प्राप्त करना आवश्यक नहीं।" इससे यह स्पष्ट है कि राजनैतिक सभा करने के लिये सूचना देना तथा आज्ञा प्राप्त करना दोनों आवश्यक हैं और धार्मिक सभाओं के लिये केवल सूचना दे देना पर्याप्त है। इस सम्बन्ध में जो सुधार घोषित हुआ है वह सरकारी गजटके पृष्ठ ११ पर पैरा नं० १० में है। जिसका भाव यह है

कि अब किसी भी सार्वजनिक सभा के लिये आज्ञा प्राप्त करना आवश्यक नहीं सूचना मात्र दे देना पर्याप्त है, किन्तु यदि अधिकारी यह समझें कि सभा राजद्रोही है या सार्वजनिक शान्ति को भंग करने वाली है तो वे उस सभा को रोक देंगे। इसका प्रभाव यह होगा कि अब राजनैतिक तथा धार्मिक सभाओं में कोई भेद नहीं रहेगा। परिणामत: धार्मिक सभाओं के ऊपर जो सूचना मात्र देने का प्रतिबन्ध था वह अब भी है। राजनैतिक दृष्टि से सत्याग्रह करने वालों को तो कुछ मिला पर धार्मिक दृष्टि जिनकी थी वे वहीं पर हैं जहाँ पहले थे। निज़ाम सरकार ने अपने श्वेत पत्र में इस बात का स्पष्टी करण पहले ही कर दिया था। हमें सत्याग्रह के परिणाम स्वरूप कुछ भी नहीं मिला।

२—दूसरी मांग को स्वीकार करना तो क्या निज़ाम सरकार ने छुवा भी नहीं, क्योंकि जो कानून धार्मिक अनुष्ठान में प्रतिबन्धक थे वे वापिस नहीं लिये गये। इस सम्बन्ध में निज़ाम सरकार ने अपने ग़ज़ट के पृष्ठ ८ पर ७ वें पैरे में यह घोषणा की है कि "एक अनुमति देने वाली उप सभा बनायी जायेगी जिसमें आधे सरकारी आधे ग़ैर 'सरकारी, आधे हिन्दू और आधे मुसल्मान सभासद् होंगे।' इस उपसभा का कर्त्तव्य विभिन्न सम्प्रदायों की धार्मिक प्रतिबन्ध सम्बन्धी प्रार्थनाओं पर सरकार को अनुमति देना होगा" पाठक बड़ी सरलता से विचार कर सकते हैं कि आर्य समाज की यह मांग पूरी हुई या नहीं ?

३—तीसरी मांग आर्य समाजों की स्थापना के सम्बन्ध में थी। रियासत ने पहले भी कहा है और अब फिर वही बात दुहरा दी गयी है कि रियासत में कोई कानून ऐसा नहीं है जिसके द्वारा किसी सभा या संस्था के निर्माण में बाधा पड़ती हो इसलिये यह मांग अनावश्यक थी और इसके स्वीकार या अस्वीकार का कोई प्रश्न ही नहीं उठता।

४—चौथी मांग आर्य समाज के मन्दिरों के निर्माण से सम्बन्ध रखती है। रियासत का कानून इस सम्बन्ध में यह है कि किसी भी सार्वजनिक धार्मिक स्थान के निर्माण करने से या मरम्मत करने से पूर्व रियासत के धर्म विभाग से आज्ञा ले लेना आवश्यक है। निजी प्रार्थनास्थान या हवनकुण्ड के बनवाने के लिये आज्ञा

की आवश्यकता नहीं। कोई अपने घर में कुछ भी करे उस पर प्रतिबन्ध नहीं है । यह बात सरकार ने अपने श्वेत पत्र में बिलकुल स्पष्ट कर दी है । गज़ट में इस सम्बन्ध में कोई घोषणा नही की गयी, हाँ इतना अवश्य हुआ है कि रियासत ने धर्म विभाग को इतना सुरक्षित कर दिया है कि स्टेट की व्यवस्थापिका सभा भी उसके सम्बन्ध में कोई कानून नहीं बना सकेगी, धर्म विभाग के ऊपर तो निज़ाम साहिब का एकाधिपत्य रहेगा। पाठक विचार सकते हैं कि हमारी यह मांग कहाँ तक पूरी हुई।

मैंने यहाँ तक निज़ाम सरकार द्वारा प्रकाशित श्वेत पत्र तथा गज़ट का ही वर्णन किया है और मुझे पूरी आशा है कि जहाँ तक आर्य समाज की माँगोंका सम्बन्ध है गज़ट की घोषणा के द्वारा हम श्वेत पत्र से कुछ भी आगे नही बढ़े यह सम्मति पाठकोंकी भी होगी। २५ जुलाई को दिल्ली की सार्वजनिक सभामें सार्वदेशिक सभा के प्रधान माननीय श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त ने भी यही भाव प्रकट किया था कि "सरकार के श्वेत पत्र में और सुधार घोषणाओं में कुछ भी अन्तर नहीं है।" ऐसी अवस्था में १९ जुलाई को सत्याग्रह स्थगित करने का कारण क्या था यह मुझ जैसे लोगों की समझ से बाहर है।

आईये अब उस ८ अगस्त की घोषणा को भी विचार दृष्टि से देखें जिसे आर्य नेताओं के सन्देह को मिटाने के लिये रियासत ने प्रकाशित किया है और जिसे देखकर विजय की घोषणा की गयी है। यहाँ यह भी ध्यान में रखना आवश्यक है कि कम्यूनिक की Legal position (कानूनी अवस्था) कुछ भी नहीं है । इसके द्वारा किसी भी कानून में परिवर्त्तन नहीं हो सकता और न इसका यह अभिप्राय है।

इस घोषणा में सबसे पहले यह कहा गया है कि सभाओं तथा संस्थाओं की स्थापना के विरुद्ध रियासत में कोई कानून नहीं है और सभाओं से तात्पर्य धार्मिक सभा भी है। सोचिये हमें इसमें क्या मिला यह घोषणा तो श्वेत पत्र द्वारा सत्याग्रह आरम्भ करने से पहिले ही हो चुकी थी।

दूसरे इस घोषणा में धर्म सम्बन्धी कार्यों के लिये जो उपसमिति बनेगी उसका कार्य क्रम लिखा गया है जिसका कि आर्य समाज की मांगों से कोई सम्बन्ध नहीं और न वह किसी सन्देह को दूर करता है। अतः अनावश्यक है।

तीसरा विषय इस घोषणा का सार्वजनिक तथा धार्मिक सभाओं का है। इसमें बतलाया गया है कि धार्मिक सभाओं के लिये यदि वे किसी सार्वजनिक या निजू मकान के अन्दर की जायें तो सूचना देना भी आवश्यक नहीं है। और मकान से तात्पर्य उस स्थान से भी है जो कि मकान के साथ ही लगा हुआ हो और चारों ओर से घिरा हुआ हो। यह कोई नई घोषणा नहीं है। यह तो वहाँ का पहिले से ही कानून है। देखो धार्मिक अनुष्ठान सम्बन्धी नियमों का नवम नियम जो कि निम्न लिखित है :—

The above rules shall not apply to those ceremonies and processions and meetings held in private or Government buildings although public may have free access to them. अर्थात उपरि लिखित कानून का सम्बन्ध उन उत्सवों जुलूसों तथा सभाओं से नहीं होगा जो कि निजी या सरकारी मकानमें मनाये जावें, चाहेसर्वसाधारण जनताको उनमें सम्मिलित होने की खुली छुट्टी हो।

इस अपवाद रूप नियम के होते हुये कौन कह सकता है कि सरकारी घोषणा में कोई नई बात कही गयी है। सत्याग्रह आरम्भ होने से पूर्व जो स्थिति थी। वही अब भी है।

चोथी घोषणा जुलूसों के सम्बन्ध में है। यह बतलाया गया है कि जुलूस निकालने के लिये पहिली बार ही आज्ञा लेना आवश्यक है। यह भी आज्ञायें प्रचलित कर दी जायेंगी कि किसी जाति के जुलूसों को केवल इस लिये रोकना कि वे नये हैं इन नियमों का उद्देश्य नहीं है।

इस घोषणा में भी कोई नई बात नहीं कही गयी। यह तो वहाँ का पहिले से ही कानून था। देखो धार्मिक उत्सव सम्बन्धी कानून के नियम २ और ३ जिनके द्वारा धार्मिक जुलूसों के लिये पहली बार ही आज्ञा लेना आवश्यक है और फिर सूचना मात्र देना पर्याप्त है। नयी घोषणा में भी यह नहीं कहा गया कि दुबारा जुलूस निकालने में सूचना देना आवश्यक नहीं है। इसके साथ ही रियासत के कानून कीदृष्टि में कौन सा जुलूस नया है या पुराना यह भी एक विशेष म त्व पूर्ण प्रश्न है। कानून इसकी स्वयम व्याख्या करता है जो कि निम्न लिखित है :—

"इस कानून की दृष्टि में कौनसा जुलूस नया है यह निश्चित रूप से बतलाना सम्भव नहीं है। यह हो सकता है कि एक जुलूस वर्षों तक लगातार न निकाला गया हो। बावजूद इसके यदि एक जुलूस कुछ अर्से तक लगभग एकसा ही निकाला गया हो तो भी वह नया नहीं कहला सकता। इसके विरुद्ध यदि एक जुलूस वर्षों से नियम पूर्वक निकाला जाता हो तोभी वह नया कहला सकता है यदि उसकी अवस्था में कुछ भी परिवर्त्तन हो जाये जैसे बाजेका बजना, स्थान या मार्ग का परिवर्त्तन, या जुलूस के पूर्व निश्चित मार्ग में जहाँ से कि वह पहले निकलता रहा है किसी धार्मिक स्थान (मस्जिद या मन्दिर आदि) का बन जाना, चाहे वह जुलूस के मार्ग के निर्धारित होने के अनन्तर ही बना हो। संक्षेप में नये और पुराने का निर्णय करना सरकारी अधिकारी की इच्छा पर निर्भर है।"

थोड़ा सा विचार कीजिये कि उपर्युक्त नियम क्या इस घोषणा से बदल गया है और यदि नहीं तो आर्य समाज की माँग कहाँ तक पूरी हुई, और आर्य समाजकी कठिनायी में कहाँ तक परिवर्त्तन हुआ? इन प्रश्नों का उत्तर मैं पाठकों के ऊपर ही छोड़ता हूँ।

पाञ्चवी घोषणा का सम्बन्ध आर्य समाज के मन्दिरों से है। इसमें आर्य मन्दिरों को तीन भागों में बाँटा गया है:—

१—निजी या किराये के मकानों में साप्ताहिक सत्संग आदि करना जिनकी स्थायी पवित्रता नहीं समझी जाती और जो कालान्तर में स्थायी पवित्रता को ग्रहण कर सकते हैं।

२—अस्थायी रूप से किसी मकान को धार्मिक सत्संग के लिये प्रयुक्त करना।

३—स्थायी रूप से किसी मकान को धार्मिक सत्संगों के लिये मोल लेना या बनवाना।

इनमें से प्रथम तथा तृतीय श्रेणी के मन्दिरों के लिये सरकार का कहना यह है कि इनके लिये धर्म विभाग की आज्ञा लेना आवश्यक है। पर इन नियमों पर पुनर्विचार हो रहा है। द्वितीय श्रेणी के मन्दिरों के सम्बन्ध में सरकार का कहना यह है कि इनके लिये आज्ञा प्राप्त करने का विधान किसी कानून में नहीं है।

अब विचार कीजिये इस घोषणा से आर्य समाज की स्थिति में क्या परिवर्त्तन हुआ। धर्म विभागका जूता ज्यों का त्यों हमारे सिर पर है हमें उससे मुक्ति नहीं मिलो। यदि इस विषय की अपील होम डिपार्टमेण्ट से होने का भी निश्चय हो गया जो कि अभी विचाराधीन है तो हमारे सिर पर एक विभागके स्थान में दो विभागों का अधिकार होगा। हमने तो मांगा था कि धर्म विभाग अथवा अन्य किसी विभाग का हमारे ऊपर अधिकार न हो पर अब धर्म विभाग का भी अधिकार होगा और गृह विभाग का भी। इसमें हमें क्या मिला यह आप ही सोच लीजिये।

छठी घोषणा प्राईवेट स्कूलों के खोलने से सम्बन्ध रखती है । इसमें कहा गया है कि "सरकार को यह सुझाया गया है कि प्राईवेट स्कूल खोलने के लिये आज्ञा प्राप्त करने के स्थान में सूचना देना हो पर्याप्त समझा जाना चाहिये सरकार इस विषय पर अन्य नियमों के पुनर्विचार के समय विचार करेगी।"

यह घोषणा आर्य समाज की इस मांग को कि प्राईवेट स्कूल खोलने में कोई प्रतिबन्ध नहीं होना चाहिये कहाँ तक पूरा करती है पाठक स्वयं विचार कर लें मेरे कहने की कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती ।

सातवीं घोषणा रियासत से बाहर के उपदेशकों के रियासत में प्रवेश के सम्बन्ध में है। इसमें कहा गया है कि यह फिर दुहराया जाता है कि बाहर के उपदेशकों का रियासत में निषेध केवल उस समय तक के लिये है जब तक वातावरण शान्त नहीं हो जाता। राज्य को पूरा विश्वास है कि निकट भविष्य में सन्तोष जनक स्थिति उत्पन्न हो जायेगी।

यह घोषणा आर्य समाज की चौदह मांगों में से छठी मांग को कुछ भी पूरा नहीं करती क्योंकि अभी बाहर के उपदेशक वहाँ जाकर प्रचार नहीं कर सकते। इस घोषणा में भी कोई नई बात नहीं कही गयी। क्योंकि श्वेत पत्र में इस माँग का उत्तर देते हुये रियासत ने बतलाया था कि कुछ वर्ष पूर्व शिया सुन्नियों के पारस्परिक कलह के कारण बाहर के मुसलमान प्रचारकों के ऊपर प्रतिबन्ध लगाया गया था, फिर अप्रैल १९३८ के साम्प्रदायिक दंगे के समय से यह प्रतिबन्ध इतर जातीय प्रचारकों

के ऊपर भी लगा दिया गया और एक वर्ष के पश्चात् इस नियम के ऊपर पुनः विचार होगा।

पाठकों को ध्यान पूर्वक विचारना चाहिये कि इस घोषणा में हमारी स्थिति वही है जो कि दिसम्बर १६३८ में थी। सत्याग्रह का इस मांग के ऊपर कोई प्रभाव नहीं हुआ।

जितना हम ऊपर लिख चुके हैं उससे अधिक ८ अगस्त की घोषणा में कुछ भी नहीं लिखा गया। मेरा दावा है कि कोई भी विचार शील महानुभाव यह नहीं कह सकता कि जहां तक कानून का सम्बन्ध है आर्य समाज की स्थिति में अणुमात्र भी परिवर्त्तन हुआ है।

यहां यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि सार्वदेशिक सभा ने आर्य समाज के साथ एक अच्छा उपहास किया है। १६ जुलाई की घोषणा के अनन्तर २५ जुलाई को सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग हुई और उसमें एक प्रस्ताव द्वारा सुधार घोषणा का स्पष्टीकरण मांगा गया और उत्तर में रियासत ने उन बातों को दुहरा दिया जो कि उसने श्वेत पत्र द्वारा दिसम्बर १६३८ में सत्याग्रह से पूर्व कहीं थीं। अब सार्वदेशिक सभा का सन्तोष हो गया है। इससे अधिक उपहास और क्या हो सकता है। यदि इतने से ही इनका सन्तोष हो सकता था तो वह तो श्वेत पत्र से ही जाना चाहिये था और सत्याग्रह का नाम भी नहीं लेना चाहिये था। यदि यह सत्य है तो सार्वदेशिक सभा ने तथा उसके माननीय प्रधान महोदय ने अपने ऊपर बड़ी जिम्मेवारी ले ली है। क्या इस समय प्रत्येक आर्य को यह पूछने का अधिकार नहीं कि इन २४ मृत्युओं (हत्याओं) की जिम्मेवारी किस पर है ? लाखों रुपया जो इस संग्राम में व्यय हुआ है उसका जिम्मेवार कौन है ? १२ सहस्र वीरों की जेल यात्रा का तथा वहां के अमानुषिक अत्याचार सहन का उत्तर दायित्व किस के ऊपर है ? भले ही वर्त्तमान कानून आपको दोषी न ठहराये, पर परमात्मा के न्यायालय में आप अपने आपको निर्दोष सिद्ध नहीं कर सकेंगे। भगवन, यदि आपको रियासत के कानून से जानकारी नहीं थी और आपने यदि श्वेत पत्र को भी नहीं पढ़ा था और

जानबूझ कर ऐसे मनुष्यों की अवहेलना करनी थी जोकि इन विषयों को जानते थे तो आपको सत्याग्रह संग्राम आरम्भ नहीं करना चाहिये था ।

सार्वदेशिक सभा के वकीलों का कहना है कि भले ही कानून में परिवर्त्तन न हुआ हो पर अब व्यवहार में परिवर्त्तन अवश्य होगा। मैं पूछता हूं क्यों ? और इसका प्रमाण क्या है ? इन भले मनुष्यों को इतना पता नहीं कि व्यवहार कानून के ऊपर आश्रित होता है और जब व्यवहार कानून को छोड़ देता है तो उसका प्रत्युपाय और उसकी वास्तविकता का परिचय जनता को सिविल कोर्ट के द्वारा हुआ करता है। क्या आप बतला सकते हैं कि किसी कोर्ट का फैसला उनके व्यवहार के विरुद्ध आपके पास है। वस्तु स्थिति यह है कि वहां का कानून गंदा है उसके आश्रित व्यवहार भी गंदा है, और अब जब कि कानून की गंदगी दूर नहीं हुई तो व्यवहार की गन्दगी दूर कैसे हो सकती है।

जिस समय तक वे गश्तियें तथा कानून जो कि धार्मिक कार्यों में प्रतिबन्ध रूप से विद्यमान हैं, मन्सूख नहीं किये जाते, वहां आर्य तथा हिन्दू सुख पूर्वक श्वास भी नहीं ले सकते। यह निःसन्देह है कि वे विकराल कानून इस समय तक अपने पूर्व रूप में ही विद्यमान हैं और सार्वदेशिक सभा ने सत्याग्रह बन्द करके अपनी विजय की घोषणा कर दी है। क्या कोई आर्य यह पूछने का साहस करेगा कि सार्वदेशिक सभा तो सत्याग्रह के स्थगित करने का प्रस्ताव २५ जुलाई को पास करती है और सत्याग्रह १६ जुलाई को ही स्थगित कर दिया जाता है यह क्यों ? और किस की आज्ञा से ? इतने उतावलेपन का कारण क्या था ?

पाठक वृन्द, लेख लम्बा हो गया है लिखने को अभी बहुत कुछ बाकी है। पर स्थान की कमी लेख को बन्द करने की प्रेरणा कर रही है। इस लिये एक बात कह कर इसे समाप्त किये देता हूँ। वह यह है कि क्या आर्य समाज की इस युद्ध में पराजय हुई है। मैं कहूँगा नहीं, क्योंकि भले ही आर्य समाज के स्वयम्भू नेताओं ने सेगांव के सन्त के बहकाने से या किसी आन्तरिक अवर्णनीय दुर्बलता से या परिस्थिति को ठीक न समझने से अथवा केवल थक जाने से इस संग्राम

क बन्द कर दिया है पर आर्य जाति ने इस समय जिस अदम्य उत्साह और अनुपम वलिदान की भावना का परिचय दिया है वह संसार के इतिहास में एक स्वर्णाक्षरों से लिखी जाने वाली घटना है। जो अपूर्व संगठन इस समय आर्य जाति में आया है वह इस संग्राम का ही परिणाम है। यदि हमने इसकी रक्षा की तो मैं समझूंगा कि हम सफल है और हमारी जय है। हल्दी घाटी के संग्राम में भले ही महाराणा प्रताप बिना अकबर की सेनाओं को पराङ्मुख किये लौटे हो पर कौन कह सकता है कि महाराणा जी पराजित हुये थे। आज भी उनके वंशज चित्तौड़ में राज्य करते हैं और अकबर के वंशज वर्मा में गड़े हैं और उनका नाम लेवा, पानी देवा भी कोई नहीं है। इतिहासकार हल्दी घाटी में महाराणा की जय के गीत गाते हैं, पाठको, हम भी आर्य समाज की जय ही इस संग्राम में कहेगें। मेरे मित्र कविरत्न सिद्धगोपाल जीने ठीक ही कहा है :—

विजितों ने बजवा दिया विजय का डंका।
हो गई आज वश में रावण की लंका॥
हिय में हर्षित हो रहे सभी नर नारी।
हो रहा प्रकट आनन्द हृदय में भारी॥
हम भी खुश हैं, विजयी लखकर तुझको।
तेरी प्रसन्नता में प्रसन्नता मुझ को॥
मैं विजय पराजय का रहस्य क्या जानूँ।
तू खुश है, तो मैं भी निज को खुश मानू॥

॥ इति शम्॥